P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11* February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

स्वतन्त्रता से पूर्व भारत में सहकारिता आन्दोलन के विकास मे वर्ष 1904 तथा 1912 ई0 के सहकारिता अधिनियमों का महत्व

अरूण प्रताप सिंह भदौरिया
शोधार्थी
इतिहास विभाग,
आगरा कॉलेज, आगरा,
उत्तर प्रदेश, भारत

पीयूष चौहान
एसोसिएट प्रोफेसर,
इतिहास विभाग,
आगरा कॉलेज, आगरा,
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन की स्थापना के साथ भारत की ग्रामीण अर्थ व्यवस्था में एक नवीन आर्थिक परिवर्तन देखने को मिला। ब्रिटिश साम्राज्यवाद के सिद्धान्तों में भारत से सम्पदा के दोहन के लिए भू राजस्व की परम्परागत व्यवस्था में परिवर्तन किया गया। ब्रिटिश प्रशासन द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक से अधिक पोषण करने का प्रयास निरन्तर किया जाता रहा था। किसानों को अकाल तथा सूखे के कारण कृषि उत्पादन के लिए सूदखोरों तथा महाजनों से ब्याज पर धन लेना पड़ रहा था। फलस्वरूप, कृषि पर उनका स्वामित्व नाममात्र ही रह गया था। तत्कालीन ब्रिटिश प्रशासन द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में किसानों की आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के लिए केवल सतही उपायों के रूप में अधिनियमों तथा आयोगों को गठित किया गया था।

इस क्रम में वर्श 1883 तथा 1884 में क्रमशः लैंड इम्प्रूवमेन्ट लोन्स एक्ट तथा एग्रीकल्चरिस्ट्स लोन्स एक्ट पारित किये गये। 1901 ई0 में अकाल आयोग का गठन किया गया। सहकारिता को प्रोत्साहन देने के लिए 1904 ई0 में क्रेडिट कोऑपरेटिव सोसाइटीज एक्ट पारित किया गया था। फलस्वरूप में ब्रिटिश भारत में व्यवस्थित रूप में सहकारी समितियों की स्थापना तथा प्रबन्धन प्रारम्भ हुआ था। 1912 ई0 में पुनः एक नये अधिनियम को पारित करके सहकारी क्षेत्र में किसानों को सहकारी समितियों के सदस्यों के रूप में ऋण देने का प्रावधान किया गया था। 1919 ई0 में मान्टेग्यू चेम्सफोर्ड अधिनियम में प्रान्त स्तर पर सहकारिता को स्वतन्त्र विभाग के रूप में एक मन्त्री के अधीन किया गया था। 1923 ई0 में ओकडेन कमेटी बनाई गई। साथ ही, कृषि षाही कमीशन, (1928) केन्द्रीय तथा प्रान्तीय बैंकिंग समितियाँ अधिनियम (1929–30) पारित किया गया था। 1935 में रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया की स्थापना की गई। 1944 में डी0आर0 गाडगिल की अध्यक्षता में कृषि उप समिति गठित की गई थी। ब्रिटिश काल के सभी वैधानिक प्रयास पर्याप्त नहीं थे।

मुख्य शब्द : सहकारिता, ऋण, साख समिति, कार्यशील पूंजी, निबन्धक, उपभोक्ता।

प्रस्तावना

ब्रिटिश भारत में ग्रामीण अर्थव्यवस्था का आधार कृषि थी। अकाल, सूखा तथा सिंचाई की कमी के कारण ग्रामीण क्षेत्र में ऋण ग्रस्तता बढ़ती रही। फलस्वरूप ब्रिटिश भारत में सहकारिता को बढ़ावा देने के लिए तत्कालीन ब्रिटिश प्रषासन ने कई आयोगों तथा अधिनियमों को पारित किया था।

तत्कालीन ब्रिटिश प्रान्त की मद्रास सरकार ने निकल्सन को अपना प्रतिनिधि बना कर योरप भेजा था। उनका उद्देश्य था कि वह वहां जा कर सहकारिता संबंधी कुछ कार्य सीख कर यहां आये। लौटने पर उसके अपना एक प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। उसकी सिफारिश पर एक कमेटी का निर्माण किया गया और इस कमेटी के प्रधान मि0 एडवर्ड बनाये गये। सबसे पहले यहसमिति 1901 में शिमला में बैठी और वहीं पर सहकारी आन्दोलन की पृष्ठभूमि तैयार की गयी। इसको कार्यान्वित करने के लिए 1904 में सहकारी अधिनियम का रूप प्रदान किया गया।[1]

इस अधिनियम के अनुसार यह योजना बनाई गयी कि एक ऐसी शाखा खोली जाय जिसमें जनता पैसा जमा किया करें। यह योजना पूर्ण रूपेण असफल रही। क्योंकि किसान गरीब था। अतः उसके पास धन जमा करने की

शक्ति ही नहीं थी और उसके धन जमा करना संभव ही न था। इसलिये यह तय किया गया कि नगरों में प्रारम्भिक सहकारी समितियां खोली जायें तथा इनके द्वारा धन एकत्र किया जाय और इस धन से एक बैंक की स्थापना की जाय।

इस अधिनियम में निम्न रूप में व्यवस्था की गई थी।

1. इस अधिनियम द्वारा यह निश्चय किया गया कि किसी भी ग्राम नगर या वर्ग के 10 व्यक्तियों को मिलाकर अपनी सहायता के लिये सहकारी समिति का निर्माण किया जा सकता है।
2. इस समिति का उद्देश्य था कि सदस्य तथा असदस्यों को सरकार तथा सरकारी सभाओं से जमानतें प्राप्त करके धनराशि एकत्रित करना तथा रजिस्ट्रार की आज्ञा से अन्य सभाओं को भी ऋण देना।
3. सहकारी साख समितियों के नियंत्रण के लिये हर प्रान्त में एक विशेष रखा गया जिसे रजिस्ट्रार की संज्ञा से अविभूत किया गया है।
4. इस रजिस्ट्रार का कर्तव्य था कि बिना किसी शुल्क के वह पांच पड़ताल करता रहे।
5. ग्राम सभाओं में 4–5 कृषकों का होना नितांत आवश्य था तथा नगर की सभाओं के लिये 4–5 गैर कृषक सदस्य होना नितान्त आवश्यक था।
6. ग्राम सभा के लाभांश को वितरण नहीं किया जा सकता था। वरना प्रत्येक वर्ष का लाभांश सुरक्षित कोष में जमा कर लिया जाता था। यदि सुरक्षित कोष से धन बच जाता था तो वह वोनस के रूप में वितरित कर दिया जाता था।
7. ऋण केवल सदस्यों को ही दिया जाता था और यदि व्यक्तिगत कोई लेना भी चाहे तो उसे जमानत पर दिया जाता था यह जमानत सोने के रूप में अचल सम्पत्ति के रूप में ही होती थी।[2]
8. सभा की पूंजी में किसी के भी हिस्से नियंत्रित किये जा सकते थे।
9. जिन सभाओं का निर्माण कानून के अन्तर्गत किया गया है उनको रजिस्ट्री कराने में फीस नहीं देनी पड़ती थी।
10. किसी भी व्यक्तिगत ऋण के लिये सभा का हिस्सा कूर्क नहीं कराया जा सकता था।
11. नगर के सभाओं का लाभांश उस समय तक वितरित नहीं किया जा सकता था जब तक कि लाभांश का चौथा भाग सुरक्षित कोष में न जमा हो जाये।
12. ग्राम सभाओं का उत्तरदायित्व असीमित होना आवश्यक था और सीमित उत्तरदायित्व केवल राज्य सरकार की आख्या से ही हो सकता था नगर की सभाओं का उत्तरदायित्व सीमित तथा असीमित दोनों प्रकार का होता था।

इस अधिनियम द्वारा सरकार को निबन्धक (रजिस्ट्रार) की आवश्यकता का अनुभव हुआ और सरकार ने रजिस्ट्रारों की नियुक्ति कर दी।[3] इसके अलावा भी जात विरादरी के आधार पर भी समितियों का निर्माण होने लगा था क्योंकि यह निश्चय हो गया था कि जो भी अपनी जात–विरादरी के 8–10 लोगों को इकट्ठा कर लेगा वह सहकारी समिति का निर्माण कर सकता है।

सन् 1904 का सहकारी अधिनियम अधूरा था। उससे सहकारिता का विकास सम्भव न था। देश की आर्थिक समस्या जटिल होती जा रही थी। इन अधूरे नियमों तथा अधिनियमों से समस्या सुलझ नहीं सकती थी। और न ही सहकारिता का कार्य ही चलाया जा सकता था। अतः सुझाव रखा गया कि दूसरा अधिनियम बनाया जाय। इस तरह 1912 में पुनः सहकारी अधिनियम को पारित किया गया। यद्यपि कुछ राज्यों ने अपने पुराने अधिनियम से ही कार्य चलाने का निश्चय किया।

सन् 1912 के अधिनियम में निम्नलिखित प्राविधान रखे गयेः–

1. अब से सभी प्रकार की सरकारी सभाओं की रजिस्ट्री हुआ करेगी। जिनका उद्देश्य सहकारिता के सिद्धान्तों पर अपने सदस्यों के आर्थिक हितों का विकास करना होगा। या जिनका उद्देश्य सभाओं को सुचारू रूप से संचालन में सहायता देना होगा।
2. केन्द्रीय सभाओं का दायित्व सीमित होगा तथा ग्राम ऋण साख–सम्बन्धी सभाओं का दायित्व असीमित होगा।
3. लेखा निरीक्षण का कार्य उसी प्रकार रखा गया जिस प्रकार अभी तक चलता आ रहा था।
4. अभी तक 1/4 भाग सुरक्षित कोष में रखने की व्यवस्था थी परन्तु अब 10ः जनहित के कार्यों के लिए भी कोष में डालने की अनुमति प्रदान की गयी।
5. प्रान्तीय सरकारों को यह अधिकार दिया गया कि वह अपना नियम अपने दृष्टि से हितार्थ समझ कर स्वयं बना सकती।
6. सहकारी शब्द का प्रयोग केवल रजिस्टर्ड सभाओं के साथ ही किया जायेगा।
7. इस अधिनियम द्वारा अल्प तथा सीमित आय वालों के उत्थान के लिए कार्य करने का अच्छा क्षेत्र हो गया था। इस अधिनियम द्वारा रजिस्ट्रार को भी काफी शक्तियां प्रदान कर दी गयी थी।
8. जिस सभा में सभी सदस्य किसान न हो वहां दायित्व सीमित ही होगा, यह नियम बना दिया गया ताकि एक व्यक्ति कुछ हिस्सों का केवल 20ः ही खरीद सके। इससे सभी को पूजीपूतियों के आधिपत्य से बचा लिया गया। पर कोई भी पूंजीपति 5 हजार से अधिक का भार नहीं खरीद सकता था। यह नियम केवल व्यक्ति पर लागू किये जाते थे किसी सभा पर यह नियम लागू नहीं था।
9. किसी सभी को निबन्धक रजिस्टर्ड कर देता है जबकि वह यह विश्वास कर ले कि इस सभा का कार्य ठीक ढंग से चल रहा।
10. यदि निबन्धक रजिस्ट्री करने से इन्कार करता है तो उसकी अपील प्रान्तीय सरकार के पास की जा सकती।
11. दो सभाओं का नाम एक नहीं हो सकता है, सभा के सदस्य वहीं माने जायेंगे जिन्होंने रजिस्ट्री के समय हस्ताक्षर किये होगें और जो उप नियमों के अनुसार सदस्य श्रेणी में प्रविष्ट हुए।

12. प्रत्येक सदस्य का एक मत होगा।
13. प्रत्येक सदस्य सदस्यता से हटने के दो वर्श बाद तक ऋण का जिम्मेदार होगा। मृत सदस्य के उत्तराधिकारी व्यक्तिगत ऋण को एक वर्श अवधि के अन्दर चुकाने के जिम्मेदार होगें।
14. सभाओं के भाग कभी बेचे नहीं जा सकते है। समितियों के आय–व्यय का विवरण रजिस्ट्रार के आदेशानुसार ही रखा जायेगा और रजिस्ट्रार द्वारा नियुक्त ऑडिटर ही उसकी जांच करता था।

शोधकार्य का उद्देश्य

1. ब्रिटिश भारत में सहकारिता आन्दोलन की पृष्ठभूमि की ऐतिहासिकता का अध्ययन करना।
2. ब्रिटिश भारत में किसानों की ऋण तथा पूंजीगत विसंगतियों का अध्ययन करना।
3. ब्रिटिश भारत में सहकारिता आन्दोलन को बढ़ावा देने के लिए पारित अधिनियमों जैसे 1904 तथा 1912 ई0 के अधिनियमों का अध्ययन करना।
4. ब्रिटिश भारत में सहकारिता आन्दोलन की वैधानिक प्रगति का मूल्यांकन करना।

साहित्यावलोकन

शोधार्थी ने इस विषय से सम्बन्धित निम्न ग्रन्थों तथा पुस्तकों का अध्ययन करके शोध पत्र को वस्तुनिष्ठ तथा मौलिक बनाने का प्रयास किया है।

सिन्हा, बी0पी0 (1992), कोआपरेटिव इन्स्ट्रमेंट्स फॉर सोशियो इकोनोमिक जस्टिस, हिमालय प्रकाशन, बम्बई। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक तथा आर्थिक सम्पन्नता के लिए सहकारिता के विभिन्न उपायों तथा योजनाओं का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। लेखक ने ग्रामीण भारत में सहकारी साख समितियों ऋण व्यवस्था तथा सहकारी बैंकों तथा सहकारी संघों की स्थापना, वितरण तथा आर्थिक परिवर्तनों के प्रयासों को प्रस्तुत किया गया है।

उत्तर प्रदेश में सहकारिता की प्रगति (1951–1999), सहकारी विभाग, लखनऊ। इस रिपोर्ट में 1951 से 1999 तक के बीच उ0प्र0 में सहकारिता की योजनाओं से सम्बन्धित विभिन्न आंकड़ों को प्रस्तुत किया गया। सरकारी प्रकाशन के रूप में इसकी मौलिकता है।

गुप्त, अम्बिका प्रसाद (1994), सहकारिता देश और विदेश में, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ। इस पुस्तक में लेखक ने यूरोप में सहकारिता के क्रमिक विका के साथ–साथ भारत में ब्रिटिश शासन तथा स्वतन्त्र भारत में सहकारिता के विकास पर विस्तृत लेखन कार्य किया है। लेखक ने उ0प्र0 में भी सहकारिता आन्दोलन के विकास तथा उसकी प्रगति में आईं बाधाओं का भी वर्णन किया है।

हजेला, टी0एन0 (1994), कोआपरेशन प्रिसीपिंल्स, प्रॉब्लम्स एण्ड प्रैक्टिस, दिल्ली। इस पुस्तक में सहकारिता के सिद्धान्तों, सहकारिता से जुड़ी समस्याओं तथा विविध सरकारी सहकारी योजनाओं की प्रगति तथा उनमें व्याप्त भ्रष्टाचार पर प्रकाश डाला गया है। भारत में सहकारिता आन्दोलन की प्रगति में कमी के कारणों को भी रेखांकित किया गया है।

रेड्डी, सुरेश वाई, (2008), कोआपरेटिव एण्ड रूरल डेबलपमेंट, अनमोल पब्लिशिंग, दिल्ली। भारत में आर्थिक नियोजन के द्वारा ग्रामीण जीवन में सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों के प्रयासों पर विस्तृत लेखन किया गया है।

सहकारी समितियों को सुविधायें

इस अधिनियम द्वारा सरकार ने समितियों को निम्नलिखित सुविधायें प्रदान की थीः–

1. सरकार की ओर से समितियों को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वह जो भी रूपया किसानों या साझेदारों को दे चुकी थी, उसको वसूलने में प्राथमिकता रख सकती थी और पहले समिति अपना ऋण अदा कर लेगी तब दूसरा व्यक्ति पैसा पा सकता था।
2. इस ऋण द्वारा उत्पादित फसलों को कोई भी कूर्क नहीं कर सकता था।
3. सभा किसी भी ऋण को अपने ऊपर ले सकती है और फिर उससे प्राप्त लाभ से उसे निकाला जा सकता था।
4. असीमित दायित्व वाली सभा मृतक के उत्तराधिकारी को चाहे जो मूल्य दे या भाग दे, पर सीमित दायित्व वाली सभा उत्तराधिकारी को अधिकार दिया।
5. सहकारी सभा के लाभ पर आय कर नहीं लग सकता है, सीमित सभा केवल अपने सदस्यों को ही ऋण देगी। पर रजिस्ट्रार की आज्ञानुसार अन्य सभाओं को भी ऋण प्रदान कर सकती थी।
6. असीमित दायित्व वाली सभा किसी भी अचल सम्पत्ति को जमानत के रूप में नहीं रखती थी।
7. समितियों के लिए ऋण सीता निर्धारित कर दी गयी है और वह इससे अधिक ऋण नहीं ले सकती है। यह समितियां गैर सदस्यों का भी रूपया जमा कर सकती थी।
8. सहकारी सभा निम्न स्थानों में पैसा जमा कर सकती थी।
   क. सरकारी सेविंग बैंक।
   ख. ट्रस्टी सिक्योरिटी।
   ग. अन्य सरकारी सभाओं के भागों में।
   घ. ऐसे बैंकों में जिनकी सहमति रजिस्ट्रार ने प्रदान की हो।

जमा किया हुआ कोष या लाभ बांटा नहीं जा सकता है। पर सीमित दायित्व वाली सभाओं का लाभांश 1/4 सुरक्षित कोष में डाल कर बांटा जा सकता था।

असीमित दायित्व वाली सभाओं का लाभ रजिस्ट्रार के आज्ञा के बांटा जा सकता था। सुरक्षित कोष केवल व्यापार में ही लगाया जा सकता था।

जब कभी सभा भंग हो जाती है तो उसका सारा रूपया सभा के निर्णयानुसार लगाया जाता है। यदि सभा निर्णय न कर सके तो रजिस्ट्रार की इच्छा से कार्य किया जायेगा। इस प्रकार ब्रिटिश भारत में इन दोनों अधिनियमों ने सहकारिता आन्दोलन को कुछ ही सीमा तक बढ़ाने में सहयोग दिया। इन दोनों अधिनियम ब्रिटिश हितों का पोशण करने वाले थे।

निष्कर्ष

ब्रिटिश भारत में सहकारिता आन्दोलन का विकास 1904 के सहकारी अधिनियम से शुरू हुआ। 1912 में एक और अधिनियम से इस आन्दोलन को गति देने का कार्य किया गया था। ब्रिटिश भारत में संवैधानिक विकास ने सहकारिता को पर्याप्त सहयोग नहीं दिया। जो भी अधिनियम पारित किये गये थे उनमें ब्रिटिश सरकार के आर्थिक हितों का पोषण किया गया। ग्रामीण सहकारी समितियों को कार्यशील पूंजी का अभाव रहा। सहकारिता की शिक्षा का अभाव होने से भी ग्रामीणों को पर्याप्त लाभ नहीं मिल पाया। सहकारिता समितियों की संख्या में भी पर्याप्त वृद्धि नहीं हुई। ब्रिटिश काल में सहकारिता मात्र एक प्रतीकात्मक आन्दोलन के रूप में विकसित हुआ था।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *काल्वर्ट, एच., द लॉ एण्ड प्रिंसीपल्स ऑफ कोआपरेशन, कलकत्ता, 1965*
2. *कुलकर्णी, के. आर., थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस ऑफ कोआपरेशन इन इण्डिया एण्ड एब्रॉड, भाग–1 व भाग–3, बम्बई, 1958*
3. *कुरैशी, ए. आई., द फ्यूर कोआपरेटिव मूवमेन्ट इन इण्डिया, मद्रास, 1947*
4. *कैसेलमैन, पाल हूबर्ट, द कोआपरेटिव मूवमेन्ट एण्ड सम ऑफ इट्स प्रॉब्लम्स, न्यूयार्क, 1952*
5. *खुसरो एण्ड अग्रवाल, द प्रॉब्लम्स ऑफ द कोआपरेटिव फार्मिंग इन इण्डिया, दिल्ली, 1961*
6. *गाडगिल, डी. आर. गार्डेन, एल. स्मिथ, एग्रीकल्चरल फाइनेन्स सब–कमेटी रिपोर्ट, 1948*
7. *धर्म कुमार (सं.), कैम्ब्रिज इकोनामिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, भाग–2, नई दिल्ली, 1984*
8. *नानावती, सर मनीलाल, रिपोर्ट ऑन द एग्रीकल्चर इनडेटेडनेस इन द बरोदा स्टेट*
9. *ममोरिया, सी.बी. एण्ड सक्सेना, आर. डी., कोआरेटिज्म इन फॉरेन लैण्ड्स, इलाहाबाद, 1957*
10. *मुखर्जी, डा. राधाकमल, इकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया (1600–1800)*
11. *वोल्फ, डब्ल्यू, एच., कोआपरेशन इन इण्डिया, (द्वितीय संस्करण), लंदन, 1927*
12. *सक्सेना, के.के., इवोल्यूशन ऑफ कोआपरेटिव थॉट, नई दिल्ली, 1974*
13. *सिंह, सी.बी. (सं.), इकोनामिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, नई दिल्ली, 1975*
14. *शोजाखानी, डा. मोहसेन, कोआपरेटिव मूवमेन्ट इन इण्डिया, नई दिल्ली, 1994*
15. *हजेला, टी. एन., कोआपरेशन प्रिंसीपल्स प्रॉब्लम्स एण्ड प्रैक्टिस, छठा संस्करण, दिल्ली, 1994*
16. *हो, डा. ई. एम., द कोआपरेशन मूवमेन्ट इन इण्डिया, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, 1960*
17. *गर्ग, डा. डी. पी., सहकारी आन्दोलन का उद्‌गम एवं विकास, मेरठ, 1974*
18. *सिंह, डॉ. साहिब एवं डॉ0 सोविन्द्र सिंह, भारत में स्थानीय स्वशासन, द्वितीय संस्करण, न्यू एकेडेमी पब्लिशिंग कम्पनी, जालन्धर, 2001*

अंत टिप्पणी

1. *स्रोतः सहकारिता अधिनियम सन् 1904 ई0।*
2. *सहकारी अधिनियम धारा 29–2।*
3. *स्रोत आच्छेन समिति का प्रतिवेदन सितम्बर 1925 पृ0 संख्या–29*